PRINTED MATTER

To ______________________

____

____

From

SANTASAROVAR,
Mount Abu (Raj)

Rajasthan Printers, Jodhpur.

संवित्

स्फुलिंग

संवित् साधानायन का विमर्श-पत्र

५

वैयक्तिक प्रसारणार्थ
सन्तसरोवर, आबू पर्वत

वसंत कण
विक्रम २०३२

त्रिधाम

चन्द्र का ध्यान

[illegible]मनिशं पूर्णेन्दुबिम्बाननं
मुक्तादामविभूषितेन वपुषा निर्मूलयन्तंतमः ।
[illegible] कुमुदं वरं च दधतं नीलालकोद्भासितं
[illegible]मृगोदिताश्रयगुणं सोमं सुधाब्धिं भजे ।।

[illegible] या स्फटिकमणि के सदृश कान्ति वाले पूर्णचन्द्रवदन भगवान [illegible] विपुल मौक्तिक आभूषणों से अलंकृत श्रीविग्रह से रात्रि के अन्धकार [illegible] करते हैं । वे अपने दक्षिण एवं वाम हस्तों में क्रमशः कुमुद पुष्प तथा [illegible] करते हैं । उनका मुखमंडल नील अलकों से उद्भासित है । [illegible] में प्रतीत मृगाकृति छाया से उनपर नीलिमा का आभास भी हो रहा [illegible] के सागर चन्द्रदेव का मैं ध्यान करता हूँ ।

*

[illegible]तुषाराभं क्षीरोदार्णवसंभवम् ।
नमामि शशिनं सोमं शंभोर्मुकुटभूषणम् ।।

[illegible] या हिम के तुल्य वर्ण वाले, क्षीरसागर से समुत्पन्न, 'सोम' [illegible] नाम से विख्यात चन्द्रमा को नमस्कार है जो भगवान शंकर के मुकुट [illegible] अलंकृत करते हैं ।

* * *

आत्म कुसुमाकर

शंभुध्यानवसन्तसंगिनि हृदारामेघजीर्णच्छदाः
स्रस्ता भक्तिलताच्छटा विलसिताः पुण्यप्रवा-लश्रिताः ।
दीप्यन्ते गुणकोरका जपवचः पुष्पाणि सद्वासनाः
ज्ञानानन्दसुधामरन्दलहरी संवित्फलाभ्युन्नतिः ॥

जब हृदय रूपी उपवन को शंभुध्यान रूपी वसन्त का संग प्राप्त होता है तब पाप के जीर्ण-शीर्ण पर्ण झर जाते हैं, भक्तिलता नित्यनूतन छटा में विल होती है, पुण्यप्रवाल प्रकट हो जाते हैं, शमदमादि आत्मगुण की कलियाँ खि आती हैं, जपस्तोत्रादि वचन पुष्प खिलते हैं, शुद्ध विद्याभ्यास की वासना फै है, ज्ञानानन्दामृत की मकरन्द रसधारा बहने लगती है और संवित्-फल परिपू पक्वता में देदीप्यमान होते हैं ।

* * *

काम दहन

अर्थान्वित होने के लिये शिवोन्मुखी, तपःस्नात सजी सँवरी हिरण्म चेतना की ओट से काम ने भूमा के स्पर्श का साहस किया । प्रयास के साफल्य में काम सहसा दग्ध हो गया । शेष रही भस्म की ढेर । मन्मथ स्मर हुआ ।

पर जिजीविषा मरी नहीं । रति तो रह गई-अनुग्रह क्षण की प्रतीक्षा में वह क्षण आया । शिव स्वीकृत सौन्दर्यमयी के करुणार्द्र दृगनिपात से उसका सौभाग्य पुनर्जीवित हो उठा—

और गगन का मधुर मौन शत २ रागिनियाँ बन बह निकला, सुवासि पवन के स्पर्श में गहन परितोष भर गया। धरती का आँचल सुन्दर मधुम सुमनों से बासन्ती हो गया ।

*

दग्ध काम की होलिका धूलि-धवल भस्म से राग-रज उड़ा । समग्र वसन्तोत्सव की यह स्वशोधनादि से स्वसमर्पणान्त अपनी अमर कहानी है ।

सदाचारानुसन्धानम्

लयविक्षेपयोः सन्धौ मनस्तत्र निरामिषम् ।
स सन्धिः सधितो येन स मुक्तो नात्र संशयः ॥ ५ ॥

सर्वत्र प्राणिनां देहे जपो भवति सर्वदा ।
हंसः सोहमिति ज्ञात्वा सर्वबन्धैर्विमुच्यते ॥ ६ ॥

लय एवं विक्षेप की सन्धि में मन अभिलाषा रहित होता है । उस सन्धि को जिसने साधना के द्वारा सिद्धि करली वह जीवन्मुक्त है, इसमें कोई सन्देह नहीं ।

सभी जगह, सभी प्राणियों के शरीर में श्वासनिःश्वास रूप से है सः नाद का जप होता रहता है । इसे 'सोहम्' ऐसा अनुसंधान कर जान लेने से जीव सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है ।

*

आनन्द वारिधि में मन मीनवत् क्रीडा करे, इसे विज्ञान सलिल की संज्ञा दी गई थी और परिणाम सम्यक् स्नान होने से पूतात्मा होना था । पवित्रता आवश्यक है, इसकी कसौटी क्या है ? कहीं आमिष (रागवासना युक्त) मन सीपियों में रजत के भास मात्र से तो भ्रमित नहीं हुआ ? ऐसा तो नहीं कि आनन्द क्रीडा के नाम से राग-जनित वासना ही पल रही हो ? संविदाचार्य [illegible] ने साधकों को इस भीषण स्थिति से बचने का संकेत "काम शब्देन भी [illegible]" कह कर दिया । अतः निष्कामता के लिये संवित के स्वरूप को जानना आवश्यक है, जो लय-विक्षेप के बीच में है ।

"निरामिषं फलेच्छाराहित्यं" । यह स्थिति न लय में है और न विक्षेप में ही सम्भव है । अतः दोनों के प्रभाव से अस्पृष्ट अवस्था में इसे सिद्ध करना होगा । यह संवित् साधक का सन्ध्यावन्दन है । कैसे करें ?

"लये सम्बोधयेच्चित्तं, विक्षेपं शमयेत् पुनः" लय में उद्बोधन
आवश्यकता है, जिससे स्वरूप की अभिव्यक्ति हो अभाव का प्रकटन नहीं।
भाँति यदि जागरण हो तो स्वरूप की अनुभूति अभिष्ट है न कि प्रपञ्च
अतः प्रपंचानुभूति के आते ही शमन आवश्यक है।

सम्बोधन एवं शमन इन दो पंखो के सहारे मन-विहग को उड़ना है
तक प्रयास करना है जब तक कि वह उस ऊँचाई को प्राप्त न करले
प्रयास की आवश्यकता नहीं। केवल पंख पसारे न चलते हुए चलने को,
हुए उड़ने की स्थिति को बनाये रखना है। चाञ्चल्यहीन यह स्थिति जड़ता
अपितु संवित् का अस्पन्दित, अस्खलित, आत्म-सुख का आस्वादन है।
चंचलताहीन तन्मनोमृतमुच्यते।" निश्चय ही इस अमृत का पान करने
जीवन्मुक्ति का अधिकारी है।

लगभग सभी साधक जप को उत्कृष्ट साधन मानते हैं। परम्परा से,
यह भी मानते हैं कि सन्ध्या ही, चाहे प्रातः हो या सायं, जप के लिये
मुहूर्त है। ऐसा क्यों?

जप प्राण व्यापार है, वाक् व्यापार है। यह मन को आन्तरिक
में भी जागरूक रखता है अतः सतत जप आवश्यक है। प्राण-स्पन्द,
वर्णों का सहज जप निरन्तर चल रहा है। नासिका से बाहर जाते समय
एवं भीतर प्रवेश करते समय स-कार के रूप प्रकट होते हैं। दोनों मिलकर
सोहं" का महावाक्य सिद्ध करते हैं। आवश्यकता है कि इस नैसर्गिक प्रयोग
अनुभूति हो। "तज्जपस्तदर्थ भावनम्।" जप के द्वारा महावाक्य 'सोहं' की अनुभूति
अपेक्षित है। समस्त विश्व स्पन्द-शक्ति है, वह मेरा ही स्वरूप है। विश्व-भाव
के समन्वय में, दिव्य, निरूद्देश्य मनस्थिति में जप किया जाना चाहिये।
यह अनुभूति होगी, ईश्वर प्राण रूपेण विश्वसृजन कर्त्ता हैं।

अत्यन्त जप से मलिन देह भी देव को साक्षात सन्निधि का माध्यम बन
बन जायेगी। अनुभूति रहेगी मात्र शिव की। सामरस्य की इस स्थिति में
बन्धन निश्शेष हो जाते है। असोम को भला कौन बाँध सकेगा?

* * *

शिवरात्रि

"...धनसुखभार से अर्धमुकुलित दक्षिण नेत्र,
...प्लावित स्निग्ध वामनेत्र, सहसा क्षिप्त
...कणमात्र से क्षण भर में उद्दण्ड काम को
... करने वाला अनलात्मक भालनेत्र—इन
... की सयुक्त – सतत – क्रीडास्थली श्रीशिव
... हमारा अवन करे।"

*

... का स्थाई भाव शम है। शम की मूर्ति शिव है। शिव का
... अद्वैत की अनुभुति आत्मा है, इस क्रम को अपनाना ही शिव
... यही ध्यान शिवरात्रि में मुख्य कर्त्तव्य है।

*

... का, प्रलय का, विषय-प्रतोति-अभाव का प्रतोक है। विषय
... आन्दोलित, स्वविस्मृत आत्मदेव विषयप्रतीति के अभाव में
... स्वस्थ है। यही शिवरूप है। उस स्वात्मस्थिति का
... रात्रि है।

त्वं-पद-विमर्श

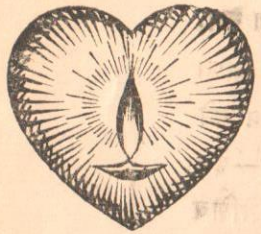

पंचकोशातिरिक्तां तामवस्थात्रय साक्षिणीम्
नुमस्त्वंपदलक्ष्यार्थां प्रत्यगात्मस्वरूपिणीम्

प्रत्यगात्मस्वपिणी संवित् को नमस्कार है जो त्वंपद के लक्ष्यार्थ में ग्राह्य होती है, पांच कोशों से अतिरिक्त है और अवस्थात्रय की साक्षिणी है।

*

त्वं=तुम। तुम्हारा स्वरुप है क्या? विचार करो, मूल में जाओ, संवित् रूप का भान होगा। जाना लक्षणा से।

लक्षणा=अवाच्य, अदृश्य को प्रकट करने का प्रकार। लक्षणा की सामग्री है पंचकोश और अवस्थात्रय। पंचकोश के परे जाओ, अवस्थात्रय से अतीत होकर देखो।

दोनों की आवश्यकता क्यों? एक हो साधन पर्याप्त क्योंन हीं?

* * *

मैं सृष्टि के आदि सलिल का हूँ एकमात्र विन्दु।
जिस में प्रसुप्त है अतल सकल सिंधु ॥

*

सुख दुःख के सागर को मन्थन करने पर जो प्राप्त होता है उसका अध्ययन ही वस्तुतः कलाकारका काम है। उसी को आनन्द के नाम से जाने अपनाते हैं।

Samvit Sphulinga

ISSUE—5

SPRING 1976

You must attain to a stature and a nature
Of the Himalayan peak, untouched, unique,
Suckled by storms, spanning the skies;
Where winters are but the womb of
Valleys of flowering rapture.

But wait you must, for that stage and the age
When it matters not where you be,
In the rich stream of city traffic
Or the lonely monastic cage.

hooma

(a mental photographic sequence from the recent amvit Satra at Bangalore)

Through the mists of time and space, Narada saw a azzling spark irradiating the four quarters. On approaching ıe mysterious centre, the sage beheld a child engrossed ı building sand castles on the shores of the shoreless ocean. 'he child chuckled and clapped his palms gleefully and uddenly he kicked his own handiwork. Lo ! in each flying rain of sand, Narada beheld a crumbling univese !

*

Narada wanders through the worlds ceaselessly seeking ıat undying freshness, absorption and sportive indifference. ıll his learning had only tossed him from restlessness to estlessness, intensifying his uncertainties and discontentment. Vhen his heart attains to white heat and is ready to melt, he ıeets Bhagawan Sanatkumara and he recognises the child of ıe vision. He surrenders, the words of the Kumara Guru ash forth a search-light into the hidden recesses of his syche and empower him to recognize that it is he himself 'hom he is searching ! The Guru demolishes the superstru- ture leaving only the limitless expanse of bliss.

Narada feels the perfect imperfection of life and the ıoving stillness of the moment. With this cheerful acceptance f himself as he is at the moment, countless doors open round him exposing a flood of light from the Supernal Sun. :very object that held back the light is now an arch-way.

*

Instructed by Guru the disciple understands that in all perceptions, the object is only a pretext to touch one's own self. Thus entire life becomes an upasana. This enables the worshipper to transcend form and concept that chain the mind to the 'thingness' of the object and to feel within the heart the vastness that holds speeding galaxies and nodding babies in one loving embrace.

Between two perceptions, the mind rests at its own source. To be established in this serene vishranti is to gain a panaromic view of life and participate intelligently in the revolutions of the vishwa-chakra without being sucked in by the vortex. For this purpose, the chitta that preserve impressions indiscriminately is trained to be purposive and ...ful. Calamities beseige the sadhaka. He welcomes them; for, they touch the deepest of his personality making him fit for the glorification of samkalpa. He is also led to the contemplation of the incomprehensible Prana-shakti that turns the hard crust of a rock into a bed of living organisms. Now the upasaka has just one desire, to own and to be owned by that Prana. But this is possible only in the ultimate experience of Truth.

With faith and dedication to Truth gathering greater momentum, the sadhaka climbs the flight of steps leading to the Mansion of Fullness. It is tremendous yet natural growth that he experiences as he ascends each of these Himalayan steps. All the same, it is a journey without progress; for, crossing the threshhold of the shrine he discov- ers himself as the limitless, the Bhooma, the self-established Ananda.

* * *

Of the Ayana

The coming of spring, a generally acclaimed ever aesthetic thrill, gains a sharp edge over the rugged crest Abu hills. It can penetrate into the innermost being scrape off the thinnest veils of insensitivity—leaving soul all afire for Samvit fulfillment. The prelude to this tion is already afoot as the kachanar begins to bloom here and there and the languid breeze becomes more he laden with the soul-stirring fragrance of karonda sh flowering in the depths of the forest.

This season, the Ashrama life was enriched daily classes in *Shivanandalahari* and weekly discourses *Mundakopanishad* There was a break when Shri Swa went to Petlad (in Gujarat) for a week of lectures on principle of the Divine Mother. On his way back, he deliv three lectures on *Shukashtakam* at Ahmedabad. It is a p sure to see that the Samvit sadhakas of that city h started weekly Sphuranas in a small intimate group.

Mahashivaratri was observed at the Ashrama on the of February. It began with mass recitations of the Shiva-Gi In the evening Shri Swamiji spoke on the Shiva-tattva:

"पूर्णं शिवं धीमहि—Let us meditate on the fulness that Shiva. This is the day of the dissolution of universe, wh this fulness is most eloquent. In creation God speaks, wor spill out as many words uttered by Him. In dissolution He silent, absorbed in Himself, as if in meditation up Himself. Let us also meditate, imitate the meditation of Maha-Yogeshwara. Let us have the daringness to enter this Night and be Awake to worship the Supreme Self." All the various distinctly unique features of Shiva-upasana we touched upon.

The holy night was devoted to pooja in the traditional beginning from 7 p. m. and concluding at 5 a. m. next Sadhakas from various places participated. They completed the vrata by partaking of consecrated food (prasadam) at the Ashrama on the noon of the 29th February.

In the first week of March 1976 Shri Swamiji visited the capital of Rajasthan, Jaipur where special talks were arranged the officers' Training College (Institute of Administration) the Police Academy. On both the occasions, the young trainees as well as the staff responded with keen interest in the attempt to indicate the inspirations they can from the cultural, ethical and spiritual traditions of great country. Shri Swamiji also addressed the intellectual elite of the city in a gathering at the university premises, presided over by the Vice-Chancellor.

In the coming season, Shri Swamiji will undertake a of Rajasthan from the first week of March to third week April. From then on, Sadhanayana will intensify its preparations for the anniversary celebrations scheduled to be at the Ayana premises from 13th to 17th of May. Sadhakas desirous of participating in this Spanda should inform one month ahead, if they need arrangements to be made their stay at Abu.

Season's Celebrations

Wed.	31.3.76	Chaitra - Navaratri begins
Wed.	7.4.76	Mahanisha - pooja
Thurs.	8.4.76	Shri Rama - navami
Fri.	9.4.76	Navaratri concludes
Tues.	4.5.76	Shri Shankara - jayanti
Thurs.	13.5.76	Anniversary of Samvit Sadhanayana

*

Sadhakas conducting or taking part in Samvit Sph... and vimarsha programmes will do well to follow these cipcles as wholeheartedly as possible :–

no argumentation; absorption.
no opposition; understanding.
no preaching; participation.
no profusion; precision.

*

To Know is Good,
To Live is Better,
To Be That, is Perfect

*

A man's mind plans his way, but the Lord directs his steps.

...of Jacaranda, entire tree laden with sky-blue blossoms. ...time they fade and fall, the silver oak will be ready ...profusion of yellow sprays dripping with honey. And ...hot summer will set in, tourist crowds will flood ...favourite haunts. But the hills will remain as serene as ...the woods, with silent excitement, prepare for the ...showers of the monsoon—once again, one more year. ...would have completed one year by then !

*

Shri Swamiji will conduct the Vyasa pooja at Mount ... on the Guru poornima, Sunday the 11th July.

All those who sent annual subscription of Rs 5.00 to ...previous issues of Sphulinga will kindly note that for the ...year beginning from Gurupoornima it has been ...to Rs. 10.00. The new subscription for the next six issues ...Sphulinga may kindly be sent to us as early as possible.

Also, we invite Sadhakas to send us brief suggestions ...desirable changes in the set up of Sphulinga matter for ...coming year.